**ओ३म्**

**‘सनातन वैदिक धर्म व संस्कृति के पुनरुद्धार में**

 **स्वामी दयानन्द और आर्यसमाज का योगदान’**

भारतीय धर्म व संस्कृति विश्व की प्राचीनतम, आदिकालीन, सर्वोत्कृष्ट, ईश्वरीय ज्ञान वेद और सत्य मान्यताओं व सिद्धान्तों पर आधारित है। सारे विश्व में यही संस्कृति महाभारत काल व उसकी कई शताब्दियों बाद तक भी प्रवृत्त रहने सहित सर्वत्र फलती-फूलती रही है। इस संस्कृति की विशेषता का प्रमुख कारण यह था कि यह ईश्वरीय ज्ञान वेद पर आधारित होने के साथ वेदों के प्रचारक व रक्षक ईश्वर के साक्षात्कृत धर्मा हमारे ऋ़षि मुनियों द्वारा प्रचारित व संरक्षित थी। महाभारत के विनाशकारी युद्ध के प्रभाव से ऋषि परम्परा समाप्त हो गई जिससे संसार में धर्म व संस्कृति सहित शिक्षा के क्षेत्र में घोर अन्धकार छा गया। इस विषम परिस्थिति में देश-देशान्तर में वही हुआ जैसा कि नेत्रान्ध व अल्प नेत्र ज्योति वाले अशिक्षित व्यक्तियों के कार्य होते हैं। यह अन्धकार समाप्त नहीं हो रहा था अपितु समय के साथ बढ़ रहा था। इस स्थिति में हम देखते हैं कि देश-देशान्तर में कुछ महापुरुषों का जन्म हुआ जिन्होंने समाज को नई दिशा देने के लिए सामयिक ज्ञान की अपनी योग्यतानुसार अपने-अपने मत व धर्म प्रचलित किये और इन्हीं मत व धर्मों के पालन के लिए उन-उन देशों में, मुख्यतः यूरोप व अरब आदि देशों में, वहां की भौगोलिक एवं समाज के पुरुषों की योग्यता के अनुसार संस्कृति का प्रादुर्भाव व विकास हुआ। भारत में सृष्टि के आदि काल से लेकर महाभारत काल तक वैदिक धर्म व संस्कृति प्रचलित रही थी। समाज में अज्ञान बढ़ जाने से इसका विपरीत प्रभाव धर्म व संस्कृति दोनों पर हुआ जिस कारण संस्कृति का स्वरुप भी सत्य के विपरीत अज्ञान प्रधान होकर अनेक विकारों से युक्त हुआ।

 संस्कृति का अध्ययन करने के लिए हमें धर्म, भाषा, स्वदेश गौरव की भावना, वेषभूषा, परम्परा वा रीति-रिवाजों आदि की स्थिति पर विचार और इसमें महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज के योगदान की चर्चा करना उपयुक्त होगा। धर्म के क्षेत्र में भारत सृष्टि के आदि काल से वेद और वैदिक मान्यताओं व सिद्धान्तों का पालक रहा है। वेद ईश्वरीय ज्ञान होने के कारण सत्य मान्यताओं, यथार्थ धर्म व संस्कृति के पोषक रहे हैं। हमारे ऋषि-मुनि भी विचार, चिन्तन, ध्यान व मनन द्वारा वेदों के सभी मन्त्रों व शब्दों में निहित मनुष्यों के लिए कल्याणकारी अर्थों व ज्ञान से देश की जनता को उपकृत करते थे जिससे सारा समाज व देश सत्य ज्ञान से युक्त व उन्नत था। गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली से सभी मनुष्यों व वर्णों की सन्तानों को गुरुकुलीय शिक्षा दी जाती थी जहां निर्धन व धनवानों के लिए वेद-वेदांगों के ज्ञान कराने वाली शिक्षा का सबके लिए समान रूप से निःशुल्क प्रबन्ध था। स्वामी दयानन्द ने प्रत्येक व्यक्ति के लिए शिक्षा को अनिवार्य करने की बात कही है। कृष्ण व सुदामा एक साथ पढ़ते थे और परस्पर मित्रवत् व्यवहार करते थे। वैदिक काल के सभी आचार्य व गुरु भी वैदिक ज्ञान के प्रबुद्ध विद्वान होते थे जिनके आचार्यत्व में विद्यार्थियों से नास्तिकता का नाश होकर एक सच्चे सच्चिदानन्द, निराकार, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, न्यायकारी, दयालु व सृष्टिकर्ता ईश्वर की उपासना देश देशान्तर में प्रचलित थी। सभी स्त्री व पुरुष स्वाध्यायशील व योगाभ्यासी होते थे जिससे सभी स्वस्थ, सुखी, अपरिग्रही व सन्तोषी होते थे। समाज व देश में ऋषि-मुनियों की बड़ी संख्या होने से कहीं कोई अज्ञान व अन्धविश्वास उत्पन्न व प्रचलित नहीं होता था। शंका होने पर राजाओं के द्वारा बड़े-बड़े शास्त्रार्थों का आयोजन होता था और विजयी पक्ष के विचारों को समस्त देश को स्वीकार करना पड़ता था। धर्मनिरपेक्षता जैसा शब्द महाभारत काल तक व उसके बाद के साहित्य में भी कहीं नहीं पाया जाता। इस प्रकार सर्वत्र वैदिक धर्म का पालन होता था।

महाभारत काल के बाद मध्यकाल में अज्ञान व अन्धविश्वासों के उत्पन्न हो जाने से धर्म का सत्य स्वरूप विकृत हो गया जिससे समाज में अवतारवाद, मूर्तिपजा, मृतक श्राद्ध, फलित ज्योतिष, पाखण्ड व आडम्बर, जन्मना जातिवाद आदि मिथ्या विश्वास उत्पन्न हो गये। महर्षि दयानन्द (1825-1883) तक इन मिथ्या विश्वासों में वृद्धि होती रही। स्वामी दयानन्द जी को सन् 1938 की शिवरात्रि को ईश्वर विषयक बोध प्राप्त हुआ। इसके कुछ काल बाद उनसे छोटी बहिन व चाचा की मृत्यु ने उनमें वैराग्य के संस्कारों को प्रबुद्ध किया। उन्होंने सत्य धर्म व संस्कृति की खोज के लिए सन् 1846 में माता-पिता व स्वगृह का त्याग कर देश भर के धार्मिक विद्वानों, शिक्षकों व योगियों को ढूंढ कर उनकी संगति व शिष्यत्व प्राप्त किया। मथुरा के प्रज्ञाचक्षु गुरू स्वामी विरजानंद सरस्वती के पास वह सन् 1860 में पहुंचे और उनसे तीन वर्षों में संस्कृत के आर्ष व्याकरण अष्टाध्यायी-महाभाष्य व निरुक्त संस्कृत-व्याकरण प्रणाली का ज्ञान प्राप्त कर समस्त वैदिक व इतर धार्मिक साहित्य के विद्वान बने। गुरु की प्रेरणा से उन्होंने संसार से मिथ्या ज्ञान नष्ट करने के साथ आर्ष ज्ञान व सत्य सनातन वैदिक मत एवं संस्कृति के प्रचार व स्थापना का कार्य किया। इस कार्य को सम्पादित करने के लिए ही उन्होंने देश का भ्रमण कर न केवल धर्मोपदेश व शास्त्रार्थ आदि ही किये अपितु आर्यसमाज की स्थापना सहित पंचमहायाविधि, सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय का प्रणयन किया औरे साथ हि चारों वेदों का संस्कृत व हिन्दी में भाष्य का अभूतपूर्व महनीय कार्य भी आरम्भ किया। वह यजुर्वेद का पूर्ण व ऋग्वेद का आंशिक भाष्य ही कर पाये। उनके इन कार्यों ने धर्म व संस्कृति के सुधार व उन्नति का अपूर्व कार्य किया। सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ लिख कर व उसमें देश व देशान्तर के प्रायः सभी मतों की समीक्षा कर वैदिक सनातन मत को वास्तविक व यथार्थ धर्म सिद्ध व घोषित किया। उनकी चुनौती उनके जीवनकाल व बाद में भी कोई स्वीकार नहीं कर सका जिस कारण से आज भी वेद धर्म सर्वोपरि महान व संसार के सभी लोगों के लिए आचरणीय बन गया है। महर्षि दयानन्द के समय व उनसे पूर्व ईसाई व इस्लाम के अनुयायी हिन्दुओं के धर्म-परिवर्तन का आन्दोलन चलाये हुए थे। बहुत बड़ी संख्या में उन्होंने सफलता भी प्राप्त की थी परन्तु स्वामी दयानन्द के कार्यों ने उनके धर्मान्तरण के कार्यपर प्रायः पूर्ण विराम लगा दिया। यदि हिन्दुओं ने उनकी वेद विषयक सत्य विचारधारा को अपना लिया होता तो आज देश का इतिहास कुछ नया व भिन्न होता। पतन को प्राप्त हो रहे वैदिक धर्म की रक्षा के लिए उनके द्वारा किया गया कार्य अपूर्व एवं महान है।

 महर्षि दयानन्द ने स्वभाषा के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। वह वेदों की संस्कृत को विश्व की सभी भाषाओं की जननी मानते थे और उसके अधिकारी विद्वान व प्रचारक हुए। इसके लिए उन्होंने वेदांग प्रकाश नाम से संस्कृत व्याकरण के अनेक ग्रन्थ भी लिखे हैं। गुजराती होते हुए भी उन्होंने गुजराती के प्रति कभी पक्षपात नहीं किया। वह प्रचार आरम्भ करने के समय से ही संस्कृत में व्याख्यान देते थे जो सरल सुबोध व मुहावरेदार होती थी जिसे संस्कृत न जानने वाले लोग भी समझ लेते थे। उनके वार्तालाप की भाषा भी यही भाषा थी। कालान्तर में उन्होंने हिन्दी भाषा को अपनाया और इसे आर्यभाषा का नाम दिया। बहुत कम समय में आपने हिन्दी सीख ली और हिन्दी में ही व्याख्यान, वार्तालाप व लेखन कार्य करने लगे। हिन्दी के प्रचार व प्रसार के लिए आपने अपने सभी ग्रन्थ हिन्दी में ही लिखे व प्रकाशित किये। आपने अपने ग्रन्थों का उर्दू आदि भाषाओं में अनुवाद करने की अनुमति इस कारण नहीं दी कि इससे हिन्दी का प्रचार व प्रसार पर विपरीत प्रभाव हो सकता था। **इस सन्दर्भ में उन्होंने यहां तक कह दिया था कि जो व्यक्ति इस देश में उत्पन्न होकर और यहां का अन्न आदि खा कर यहां की सरल भाषा हिन्दी को नहीं सीख सकता उससे देश के हित के लिए और क्या उम्मीद की जा सकती है?** भारत के सरकारी दफतरों में काम काज की भाषा तय करने के लिए अंग्रेजों ने जब एक कमीशन बनाया तो हिन्दी को सरकारी कामकाज की भाषा स्वीकार कराने के लिए स्वामी दयानन्द जी ने देश भर में एक हस्ताक्षर अभियान चलाया और उस पर करोड़ो लोगों के हस्ताक्षर कराये। हस्ताक्षर अभियान चलाकर सरकार से अपनी बात स्वीकार कराने वाले शायद स्वामी दयानन्द भारत के प्रथम महापुरुष थे। ऐसा ही अभियान उन्होंने गोरक्षा अथवा गोहत्या बन्द कराने के लिए भी चलाया था। महर्षि दयानन्द के कार्यों से देश में हिन्दी भाषा का अपूर्व प्रचार हुआ जिसका प्रभाव उनके समकालीन व परवर्ती संस्कृत व हिन्दी साहित्य पर भी पड़ा। इस विषय पर शोधार्थियों ने शोध प्रबन्ध भी प्रस्तुत किये हैं। स्वभाषा संस्कृत व हिन्दी के प्रचार व प्रसार में स्वामी दयानंद जी का सर्वाधिक योगदान है।

 मनुष्यों की वेशभूषा भी किसी संस्कृति का एक आवश्यक अंग होती है। भारत में प्राचीन काल से ही पुरुषों व स्त्रियों की वेश भूषा निर्धारित है। पुरुषों के लिए धोती, कुर्ता, लोई वा शाल सहित बन्द गले का कोट व जैकेट एवं सिर पर पगड़ी निर्धारित रही है। इसी प्रकार से स्त्रियों के लिए भी बचपन में फ्राक से आरम्भ कर किशोर, युवावस्था व उसके बाद शलवार, कुर्ता, चुन्नी वा दुपट्टा, साड़ी आदि का पहनावा प्रचलन में रहा है। भौगोलिक दूरियों के कारण इनमें कुछ न्यूनाधिक परिवर्तन आदि भी देखने को मिलता है जिसमें एक ही मूल भावना काम करती दिखाई देती है। वेशभूषा विषयक भारतीय चिन्तन फैशन न होकर शरीर की रक्षा व सभ्यता का सूचक होता है जिससे किसी के मन में किसी प्रकार विकार आदि उत्पन्न न हो। 8वीं शताब्दी से भारत में मुगलों का आना आरम्भ हुआ और उन्होंने अपने धर्म, भाषा व वेशभूषा आदि थोपने में कोई कसर नहीं रखी। उसके बाद अंग्रेज आये और देश को गुलाम बनाया। उन्होंने भी अपने ईसाई धर्म, अंग्रेजी भाषा व परम्पराओं का प्रचार व प्रसार किया। हमारे देश के लोग अंग्रेजों से कुछ अधिक ही प्रभावित हो गये और आज भी इनकी ही वेश भूषा का प्रचलन देश भर में देखने को मिलता है। भारतीय वेशभूषा का प्रचलन कम हो रहा है और विेदेशी यूरोपीय वेशभूषा का प्रचलन बढ़ रहा है। महर्षि दयानन्द ने भारतीय धर्म, संस्कृति के प्रति गौरव का भाव जगाया तो इसमें भारतीय वेशभूषा पर भी ध्यान केन्द्रित रखा। वह सदैव धोती का प्रयोग करते थे। भारतीय कुर्ते में भी उनके चित्र उपलब्ध है। सम्मान की निशानी सिर पर पगड़ी का भी वह प्रयोग करते थे और यदि ऊपर का उनका भाग वस्त्रहीन है, तो वह प्रायः शाल या लोई ओढ़ते थे। उनके जीवन में प्रसंग आता है कि एक बार उनका एक अनुयायी अपने पुत्र को उनके पास लाया और उसके सुधार के लिए स्वामी जी को उस युवक उपदेश देने को कहा। स्वामी जी ने देखा कि उस युवक ने विदेशी वेशभूषा पैण्ट-शर्ट पहन रखी है। इसका उल्लेख कर उन्होंने उस बालक को अपने पूर्वजों की याद दिलाई और बताया कि उनकी वेशभूषा क्या व कैसी होती थी? यह भी बताया कि ज्ञान व चरित्र की दृष्टि से हमारे उन पूर्वजों की संसार में कोई समानता नहीं है। उनके विचारों का उस युवक पर प्रभाव पड़ा और उसने अपना सुधार किया। आज भी हम देखते हैं कि आर्यसमाज के अनुयायी अपने घरों में बच्चों, विशेष कर कन्याओं व स्त्रियों के भारतीय वेशभूषा के पक्षधर है और उनके परिवारों में इस दृष्टि से सख्त निर्देश हैं कि भारतीय वेशभूषा का ही प्रयोग हो। जहां तक अन्य सभी संस्थाओं से तुलना की बात है, आर्यसमाज पहले भी और आज भी भारतीय वेशभूषा का सबसे बड़ा समर्थक व पक्षधर है। आज भी हमारे युवक व युवतियों के गुरुकुलों व शिक्षण संस्थाओं में भारतीय वेशभूषा का ही प्रचलन व प्रभाव है। हां, डी.ए.वी. कालेज को आर्यसमाज के वेशभूषा विषयक प्रभाव में सम्मिलित स्वीकार नहीं किया जा सकता।

किसी मनुष्य जाति व धर्म के मानने वाले लोगों की अपनी परम्परायें व रीति-रिवाज भी होते हैं जो कि उनकी संस्कृति का अंग कहलाते हैं। भारतीय धर्म व संस्कृति की बात करें तो यहां भी अनेकानेक परम्परायें व रीति-रिवाज प्रचलित हैं जिनके संशोधन व सुधार सहित अनावश्यक का त्याग तथा भूली हुई आवश्यक परम्पराओं का पुनः प्रचलन स्वामी दयानन्द जी व आर्यसमाज ने किया है। स्वामी दयानन्द ने समस्त वैदिक परम्पराओं को पंच महायज्ञों व 16 वैदिक संस्कारों में ढ़ालने सहित भारत में मनायें जाने वाले मुख्य पर्वों होली, दीपावली, शिवरात्रि आदि पर्वों को वैदिक विधि से मनाये जाने का शुभारम्भ किया। वैदिक परम्पराओं में प्रातः व सायं ईश्वरोपासना, दैनिक अग्निहोत्र, माता-पिता-आचार्य-वृद्धों आदि का सम्मान, पशु-पक्षी-कीट-पतंगों आदि को अन्न व भोजन कराना तथा अतिथियों का सत्कार करने सहित गर्भाधान से लेकर अन्त्येष्टि पर्यन्त 16 संस्कारों को प्रचलित किया। आर्यसमाज अविद्या का नाश व विद्या की वृद्धि का पक्षधर है और सभी मनुष्यों को वेदादि ग्रन्थों सहित सभी प्रकार के ज्ञान की पुस्तकों को नियमित रूप से पढ़ने व पढ़ाने को जीवन का अनिवार्य अंग मानता है। आर्यसमाज वेदादि सभी लाभकारी ग्रन्थों के नियमित सवाध्याय का प्रबल समर्थक है। वैदिक संस्कृति में अच्छी परम्पराओं का प्रचलन व अनावश्यक एवं बुरी प्रथाओं के नियंत्रण का आर्यसमाज समर्थक है। इस क्षेत्र में आर्यसमाज ने बहुमूल्य योगदान दिया है। आर्यसमाज की प्रत्येक मान्यता व सिद्धान्त सत्य मान्यताओं व तर्कों पर आधारित हैं जिनसे समाज लाभान्वित होता है। इसी कारण सभी लोग अपनी अपनी ज्ञान की योग्यता के अनुसार इसे पसन्द करते व अपनाते हैं। यही कारण है कि आर्यसंमाज भारत तक ही सीमित न होकर एक विश्वव्यापी संगठन है।

मनुष्य का व्यवहार, व्यक्तिगत व सामाजिक नियम तथा विधि-विधान कैसें हों, इसके लिए आर्यसमाज वैदिक परम्पराओं व मनुस्मृति के अविवादित सभी बुद्धिसंगत व देश समाजोपयोगी नियमों को स्वीकार करता है। स्वामी दयानन्द ने ऐसे अधिकांश नियमों का सत्यार्थप्रकाश सहित अपने ग्रन्थों में उल्लेख भी किया है। इसके अतिरिक्त स्वामी दयानन्द वैदिक धर्म के प्रतीक चोटी, यज्ञोपवीत व सिर पर पगड़ी धारण करने के भी समर्थक है। बहुत से लोग आर्यसमाज के एतदविषयक तर्कों से सहमत होने के कारण इनका अनुसरण करते हैं। महर्षि दयानन्द द्वारा वैदिक धर्म के विश्वास व नियम मान्यता व परम्परा को सत्य व असत्य की कसौटी पर कस कर निर्धारित किये गये हैं। मूर्तिपूजा, अवतारवाद, मृतक श्राद्ध, फलित ज्योतिष, पुनविर्वाह व विधवा विवाह व इतर कार्यों विषयक नियम, जन्मना जातिवाद, वर्णव्यवस्था, स्त्री शिक्षा आदि विश्वासों को भी सत्य व असत्य की कसौटी पर कस कर निर्धारित किया गया है जिसका समाज पर व्यापक प्रभाव पड़ा है। अधिकांश शिक्षित लोग आर्यसमाज की विचारधारा से सहमत हैं। आर्यसमाज ही देश की पहली संस्था है जिसने अंग्रेजों के दमनकारी शासन में स्वदेश भक्ति को उदबुद्ध किया जिसका परिणाम भारत को सन् 1947 में स्वतन्त्रता प्राप्त हुई। शहीद पं. रामप्रसाद बिस्मिल, लाला लाजपतराय, स्वामी श्रद्धानन्द व शहीद भगतसिंह जी का परिवार स्वामी दयानन्द व आर्यसमाज के अनुयायी थे। आजादी के आन्दोलन में आर्यसमाज के अनुयायी की संख्या सर्वाधिक थी ऐसा इतिहास में अंकित है।

स्वामी दयानन्द और आर्यसमाज भारत की वैदिक कालीन प्राचीन व विशुद्ध संस्कृति के पोषक व पक्षधर थे और इसी को उन्होंने अपने घर्म व संस्कृति प्रचार के आन्दोलन में समाहित किया। इनका समाज पर व्यापक प्रभाव हुआ और आज के वैज्ञानिक युग में इसका भविष्य उज्जवल स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। आर्यसमाज के पास संस्कृति से सम्बन्धित संसार की सबसे प्राचीन पुस्तकें चार वेद व महाभारतकाल व उससे पूर्व लिखे गये मनुस्मृति, 6 दर्शन, उपनिषदें, रामायण व महाभारत आदि ग्रन्थ हैं। यह ग्रन्थ न केवल भारतीय वैदिक धर्मियों के लिए ही मान्य हैं अपितु यह सारे संसार के मनुष्यों के धर्म व संस्कृति के आदि व आदर्श स्रोत हैं और सनातन सर्वकल्याणकारी शिक्षाओं के ग्रन्थ हैं। विश्व को सभी पूर्वाग्रह छोड़कर वैदिक साहित्य का अध्ययन कर अपने मत-पन्थों की अविद्या से युक्त मान्यताओं व परम्पराओं को संशोधित व सुधार कर अपनाना चाहिये जिससे संस्कृति के क्षेत्र में एकरूपता आ सके।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**